ISSN: 2349-7637 (Online)
Volume-1, Issue-4, November 2014
RESEARCH HUB – International Multidisciplinary Research Journal
Research Paper

भारत में भाषाई एवं क्षेत्रीय आंदोलनों का राज्य स्वायत्तता और संघीय राजनीति पर प्रभाव

Dr. Suman kujur

Assistant Professor, Department of Political Science, B.S College, Lohardaga, Ranchi University, Ranchi

Abstract:
भारत एक बहुभाषी, बहुसांस्कृतिक और बहु-क्षेत्रीय देश है, जहाँ सामाजिक-सांस्कृतिक विविधताओं के कारण समय पर भाषाई और क्षेत्रीय आंदोलनों का उदय हुआ है। स्वतंत्रता के बाद इन आंदोलनों ने भारतीय संघीय व्यवस्था, राज्य स्वायत्तता और संघीय राजनीति के स्वरूप को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित किया। भाषाई आंदोलनों ने मुख्यतः भाषा, सांस्कृतिक पहचान और प्रशासनिक मान्यता से जुड़ी मांगों को सामने रखा, जिसके परिणामस्वरूप ***1950*** और ***1960*** के दशकों में भाषाई आधार पर राज्यों के पुनर्गठन की प्रक्रिया शुरू हुई। ***1956*** के राज्यों के पुनर्गठन अधिनियम ने राज्यों की सीमाओं को भाषाई आधार पर पुनः निर्धारित किया, जिससे प्रशासनिक दक्षता और क्षेत्रीय पहचान को मजबूती मिली। दूसरी ओर, क्षेत्रीय आंदोलनों ने आर्थिक असमानता, राजनीतिक उपेक्षा और संसाधनों के असमान वितरण जैसे मुद्दों को राष्ट्रीय स्तर पर उठाया। झारखंड, उत्तराखंड, छत्तीसगढ़ और तेलंगाना जैसे राज्यों का गठन इन आंदोलनों का प्रत्यक्ष परिणाम है। इन आंदोलनों ने क्षेत्रीय दलों के उदय को भी प्रोत्साहित किया, जिससे भारतीय राजनीति में बहुदलीय प्रणाली और गठबंधन सरकारों की प्रवृत्ति मजबूत हुई। साथ ही, इन आंदोलनों ने केंद्र-राज्य संबंधों, भाषा नीति और क्षेत्रीय पहचान के प्रश्नों को भी प्रभावित किया। इस प्रकार, भाषाई और क्षेत्रीय आंदोलनों ने भारतीय संघवाद को अधिक सहभागी, विकेंद्रीकृत और लोकतांत्रिक बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

Keywords:- भाषाई आंदोलन, क्षेत्रीय आंदोलन, राज्य स्वायत्तता, संघीय राजनीति, भारतीय संघवाद, और क्षेत्रीय दल आदि।

प्रस्तावना

भारत एक बहुभाषी, बहुसांस्कृतिक और बहु–क्षेत्रीय देश है, जहाँ सामाजिक–सांस्कृतिक विविधताओं के कारण समय–समय पर भाषाई और क्षेत्रीय आंदोलनों का उदय हुआ है। स्वतंत्रता के बाद राष्ट्रीय एकता को बनाए रखते हुए क्षेत्रीय पहचान, भाषा और सांस्कृतिक अस्मिता की रक्षा करना भारतीय लोकतंत्र के सामने एक महत्वपूर्ण चुनौती रहा। इसी संदर्भ में भाषाई और क्षेत्रीय आंदोलनों ने भारत की राजनीतिक तथा प्रशासनिक संरचना को गहराई से प्रभावित किया। विशेष रूप से 1950 और 1960 के दशकों में भाषाई आधार पर राज्यों के पुनर्गठन की मांग व्यापक जनआंदोलन के रूप में उभरी, जिसके परिणामस्वरूप 1956 में राज्यों का पुनर्गठन अधिनियम लागू हुआ और कई राज्यों की सीमाएँ भाषाई आधार पर निर्धारित की गईं। इससे एक ओर विविधता में एकता की भावना मजबूत हुई, वहीं दूसरी ओर राज्य स्वायत्तता की मांग को भी बल मिला। इन आंदोलनों ने केंद्र से अधिक राजनीतिक और वित्तीय अधिकारों की मांग को जन्म दिया, जिसे कई विद्वान "सौदेबाजी वाले संघवाद" के रूप में देखते हैं। साथ ही, अकाली दल, शिवसेना और तेलुगु देशम पार्टी जैसे क्षेत्रीय दलों के उदय ने भारतीय संघीय राजनीति को अधिक बहुलतावादी और गठबंधन आधारित बना दिया। इसके अतिरिक्त, उत्तराखंड, झारखंड और छत्तीसगढ़ जैसे छोटे राज्यों की मांगों ने उप–क्षेत्रीय पहचान को भी राजनीतिक विमर्श का महत्वपूर्ण हिस्सा बना दिया। इस प्रकार, भाषाई एवं क्षेत्रीय आंदोलनों ने भारतीय संघीय ढांचे, राज्य स्वायत्तता और लोकतांत्रिक राजनीति के स्वरूप को महत्वपूर्ण रूप से आकार दिया है।

राज्य स्वायत्तता और संघीय राजनीति का अर्थ

- **राज्य स्वायत्तता–** राज्य स्वायत्तता से तात्पर्य संघीय शासन व्यवस्था के अंतर्गत राज्यों की उस स्वतंत्रता और अधिकार से है, जिसके माध्यम से वे अपने प्रशासनिक, वित्तीय तथा सामाजिक मामलों में स्वतंत्र रूप से निर्णय ले सकें। इसका मुख्य उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि राज्य अपने स्थानीय मुद्दों, सांस्कृतिक पहचान, शिक्षा, कृषि और विकास नीतियों को केंद्र सरकार के अत्यधिक हस्तक्षेप के बिना निर्धारित कर सकें। भारत के संविधान में केंद्र और राज्यों के बीच शक्तियों का विभाजन किया गया है, जिससे राज्यों को अपनी आवश्यकताओं के अनुसार नीतियाँ बनाने का अधिकार मिलता है। राज्य स्वायत्तता क्षेत्रीय आवश्यकताओं को पूरा करने, स्थानीय विकास को बढ़ावा देने और लोकतांत्रिक भागीदारी को मजबूत बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

2014, RHIMRJ, All Rights Reserved

- **संघीय राजनीति–** संघीय राजनीति उस शासन प्रणाली को दर्शाती है जिसमें सत्ता और अधिकार केंद्र सरकार तथा राज्य सरकारों के बीच संविधान द्वारा विभाजित होते हैं। इस व्यवस्था में दोनों स्तर की सरकारें अपने–अपने अधिकार क्षेत्र में कार्य करती हैं, लेकिन राष्ट्रीय हितों की पूर्ति के लिए परस्पर सहयोग भी बनाए रखती हैं। भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में संघीय राजनीति का उद्देश्य राष्ट्रीय एकता और क्षेत्रीय आवश्यकताओं के बीच संतुलन स्थापित करना है। भारत में शक्तियों का विभाजन संघ सूची, राज्य सूची और समवर्ती सूची के माध्यम से किया गया है। यह प्रणाली संसाधनों के उचित वितरण, नीति समन्वय और विभिन्न क्षेत्रों की आकांक्षाओं को राष्ट्रीय राजनीति में प्रतिनिधित्व प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

भारत में भाषाई और क्षेत्रीय आंदोलनों का वर्णन

1. भाषाई आंदोलन– भारत में भाषाई आंदोलन मुख्यतः भाषा, सांस्कृतिक पहचान और प्रशासनिक मान्यता से जुड़े मुद्दों के कारण उत्पन्न हुए। स्वतंत्रता के बाद विभिन्न क्षेत्रों के लोगों ने यह मांग उठाई कि राज्यों का पुनर्गठन उनकी मातृभाषा के आधार पर किया जाए, ताकि प्रशासन, शिक्षा और सांस्कृतिक विकास स्थानीय भाषा में हो सके। 1950 के दशक में पोट्टी श्रीरामुलु के अनशन के बाद 1953 में आंध्र प्रदेश का गठन हुआ, जिसने भाषाई आधार पर राज्यों के पुनर्गठन की प्रक्रिया को गति दी। इसके परिणामस्वरूप 1956 में राज्यों का पुनर्गठन अधिनियम लागू हुआ और कई राज्यों की सीमाएँ भाषाई आधार पर निर्धारित की गईं। दक्षिण भारत में हिंदी को अनिवार्य रूप से लागू करने के प्रयासों के विरोध में तमिलनाडु में व्यापक आंदोलन हुए, जिसके कारण हिंदी के साथ अंग्रेजी का प्रयोग भी जारी रखा गया। इन आंदोलनों ने भाषाई गौरव, सांस्कृतिक प्रतिनिधित्व और भारतीय संघीय ढाँचे में क्षेत्रीय आकांक्षाओं को मजबूत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

2. क्षेत्रीय आंदोलन– भारत में क्षेत्रीय आंदोलन देश की सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक विविधता से उत्पन्न क्षेत्रीय पहचान और विकास संबंधी मांगों का परिणाम हैं। ये आंदोलन अक्सर आर्थिक असमानता, राजनीतिक उपेक्षा, संसाधनों के असमान वितरण और सांस्कृतिक पहचान की रक्षा से जुड़े होते हैं। कई क्षेत्रों में लोगों ने अलग राज्य या अधिक स्वायत्तता की मांग उठाई, जिसके परिणामस्वरूप झारखंड, छत्तीसगढ़ और उत्तराखंड जैसे नए राज्यों का गठन वर्ष 2000 में हुआ, जबकि तेलंगाना राज्य 2014 में बना। इसके अलावा गोरखालैंड, बोडोलैंड और उत्तर–पूर्व के कुछ क्षेत्रों में उप–क्षेत्रीय स्वायत्तता की मांग से जुड़े आंदोलन भी हुए। कुछ आंदोलनों ने अलगाववादी रूप भी लिया, जिससे राष्ट्रीय एकता को चुनौती मिली। फिर भी, क्षेत्रीय आंदोलनों ने स्थानीय मुद्दों को राष्ट्रीय राजनीति में स्थान दिलाया और भारत की संघीय व्यवस्था को अधिक विकेंद्रीकृत और उत्तरदायी बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

भारत में भाषाई आंदोलनों का राज्य स्वायत्तता और संघीय राजनीति पर प्रभाव

भारत एक बहुभाषी देश है जहाँ भाषा केवल संचार का माध्यम नहीं बल्कि सांस्कृतिक पहचान और राजनीतिक प्रतिनिधित्व का महत्वपूर्ण आधार भी है। स्वतंत्रता के बाद विभिन्न क्षेत्रों में भाषाई आंदोलनों का उदय हुआ, जिनका मुख्य उद्देश्य अपनी मातृभाषा को प्रशासन, शिक्षा और सांस्कृतिक जीवन में उचित स्थान दिलाना था। इन आंदोलनों ने भारत की संघीय व्यवस्था और राज्य स्वायत्तता की अवधारणा को गहराई से प्रभावित किया।

1. भाषाई आधार पर राज्यों का पुनर्गठन– स्वतंत्रता के बाद सबसे महत्वपूर्ण भाषाई आंदोलन तेलुगु भाषी लोगों द्वारा आंध्र प्रदेश के गठन की मांग के रूप में सामने आया। पोटी श्रीरामुलु के 1952–53 के अनशन के बाद 1953 में आंध्र प्रदेश राज्य का गठन हुआ। इसके बाद भाषाई आधार पर राज्यों के पुनर्गठन की मांग पूरे देश में तेज हो गई। परिणामस्वरूप 1956 में राज्य पुनर्गठन आयोग की सिफारिशों के आधार पर राज्यों का पुनर्गठन अधिनियम लागू किया गया। इसके तहत भारत में 14 राज्यों और 6 केंद्र शासित प्रदेशों का गठन किया गया। इस प्रक्रिया ने प्रशासनिक दक्षता को बढ़ाया और राज्यों को अपनी भाषा और संस्कृति के अनुसार शासन चलाने की अधिक स्वतंत्रता प्रदान की, जिससे राज्य स्वायत्तता मजबूत हुई।

2. क्षेत्रीय दलों का उदय और संघीय राजनीति का क्षेत्रीयकरण– भाषाई आधार पर राज्यों के निर्माण ने क्षेत्रीय राजनीतिक दलों को उभरने का अवसर दिया। तमिलनाडु में द्रविड़ आंदोलन के परिणामस्वरूप द्रविड़ मुनेत्र कषगम और बाद में अखिल भारतीय अन्ना द्रविड़ मुनेत्र कड़गम जैसे दल मजबूत हुए। आंध्र प्रदेश में तेलुगु देशम पार्टी, महाराष्ट्र में शिवसेना और पंजाब में अकाली दल जैसे दलों ने क्षेत्रीय भाषाई और सांस्कृतिक मुद्दों को राजनीति का केंद्र बनाया। इन क्षेत्रीय दलों के उदय ने भारतीय राजनीति को बहुदलीय और गठबंधन आधारित बना दिया। 1990 के दशक के बाद केंद्र में गठबंधन सरकारों का दौर शुरू हुआ, जिसमें क्षेत्रीय दलों की भूमिका निर्णायक बन गई। इससे संघीय राजनीति अधिक सहभागी और विकेंद्रीकृत हुई।

2014, RHIMRJ, All Rights Reserved
ISSN: 2349-7637 (Online)

3. भाषा नीति और केंद्र–राज्य संबंध– भाषाई आंदोलनों ने भारत की भाषा नीति को भी प्रभावित किया। संविधान के अनुच्छेद 343 के अनुसार हिंदी को राजभाषा बनाने का प्रावधान किया गया था, लेकिन दक्षिण भारत विशेषकर तमिलनाडु में हिंदी के अनिवार्य प्रयोग के खिलाफ तीव्र आंदोलन हुए। इन आंदोलनों के कारण 1963 के राजभाषा अधिनियम में संशोधन किया गया और हिंदी के साथ अंग्रेजी के प्रयोग को भी जारी रखा गया। इस घटना ने यह स्पष्ट किया कि भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में भाषा नीति को संतुलित और समावेशी होना चाहिए। साथ ही, इससे केंद्र को राज्यों की भाषाई संवेदनशीलताओं का सम्मान करने के लिए प्रेरित किया गया।

4. मातृभाषा, शिक्षा और सांस्कृतिक पहचान– भाषाई आंदोलनों के परिणामस्वरूप राज्यों में स्थानीय भाषाओं को शिक्षा, प्रशासन और सांस्कृतिक गतिविधियों में अधिक महत्व मिला। इससे क्षेत्रीय साहित्य, संस्कृति और परंपराओं को बढ़ावा मिला। उदाहरण के लिए तमिल, तेलुगु, कन्नड़ और मराठी भाषाओं में शिक्षा और प्रशासनिक कार्यों का विस्तार हुआ। इसके अलावा, भाषाई आंदोलनों के प्रभाव से भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में समय–समय पर नई भाषाओं को शामिल किया गया। वर्तमान में इस अनुसूची में 22 भाषाओं को मान्यता प्राप्त है, जो भारत की भाषाई विविधता और सांस्कृतिक समावेशिता को दर्शाती है।

5. क्षेत्रवाद और राजनीतिक चुनौतियाँ– हालाँकि भाषाई आंदोलनों ने लोकतंत्र और संघवाद को मजबूत किया, लेकिन कुछ मामलों में इससे क्षेत्रवाद और अंतर–राज्यीय विवाद भी उत्पन्न हुए। उदाहरण के लिए महाराष्ट्र–कर्नाटक सीमा विवाद या "भूमिपुत्र" की राजनीति ने क्षेत्रीय पहचान को लेकर तनाव पैदा किया। फिर भी, अधिकांश मामलों में इन आंदोलनों ने लोकतांत्रिक संवाद के माध्यम से समाधान का मार्ग प्रशस्त किया।

प्रमुख भाषाई आंदोलन और उनके परिणाम

भाषाई आंदोलन / क्षेत्र	मुख्य मांग	प्रमुख परिणाम
तेलुगु आंदोलन (आंध्र प्रदेश)	तेलुगु भाषी लोगों के लिए अलग राज्य	1953 में आंध्र प्रदेश का गठन; 1956 पुनर्गठन का आधार
तमिल आंदोलन	हिंदी को अनिवार्य बनाने का विरोध	1963 राजभाषा अधिनियम; अंग्रेजी का प्रयोग जारी
बॉम्बे राज्य आंदोलन	मराठी और गुजराती भाषी राज्यों की मांग	1960 में महाराष्ट्र और गुजरात का गठन
पंजाबी आंदोलन	पंजाबी भाषी राज्य की मांग	1966 में पंजाब और हरियाणा का निर्माण
द्रविड़ आंदोलन	हिंदी थोपने का विरोध और क्षेत्रीय पहचान	दक्षिण भारत में क्षेत्रीय दलों का मजबूत होना

भारत में क्षेत्रीय आंदोलनों का राज्य स्वायत्तता और संघीय राजनीति पर प्रभाव

भारत एक बहुभाषी, बहुसांस्कृतिक और बहु–क्षेत्रीय देश है, जहाँ विभिन्न क्षेत्रों की सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक परिस्थितियाँ एक–दूसरे से भिन्न हैं। इन विविधताओं के कारण समय–समय पर क्षेत्रीय आंदोलनों का उदय हुआ है। क्षेत्रीय आंदोलन प्रायः भाषाई पहचान, सांस्कृतिक अस्मिता, आर्थिक पिछड़ेपन और राजनीतिक उपेक्षा की भावना से उत्पन्न होते हैं। इन आंदोलनों का मुख्य उद्देश्य अपने क्षेत्र के विकास, संसाधनों पर अधिकार तथा प्रशासनिक निर्णयों में अधिक भागीदारी प्राप्त करना होता है। भारत में झारखंड, उत्तराखंड, छत्तीसगढ़ और तेलंगाना जैसे नए राज्यों का गठन क्षेत्रीय आंदोलनों का प्रत्यक्ष परिणाम है। इन आंदोलनों ने भारतीय संघीय व्यवस्था को प्रभावित करते हुए राज्य स्वायत्तता को मजबूत किया और संघीय राजनीति में क्षेत्रीय दलों की भूमिका को बढ़ाया। हालांकि, कभी–कभी अत्यधिक क्षेत्रीयता केंद्रदृराज्य संबंधों में तनाव तथा राष्ट्रीय एकता के लिए चुनौती भी उत्पन्न कर सकती है।

क्षेत्रीय आंदोलनों का राज्य स्वायत्तता पर प्रभाव

1. पहचान की रक्षा– क्षेत्रीय आंदोलनों ने विभिन्न क्षेत्रों की भाषाई, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक पहचान को संरक्षित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उदाहरण के लिए, भाषाई आधार पर राज्यों के पुनर्गठन ने लोगों को अपनी भाषा और संस्कृति के अनुरूप प्रशासन और शिक्षा प्राप्त करने का अवसर दिया। इससे स्थानीय परंपराओं और सांस्कृतिक विरासत को संरक्षण मिला।

2. अधिक शक्ति की मांग– कई क्षेत्रीय आंदोलनों ने केंद्र सरकार से अधिक प्रशासनिक और वित्तीय अधिकारों की मांग की। झारखंड, छत्तीसगढ़, उत्तराखंड और तेलंगाना जैसे राज्यों का गठन लंबे समय तक चले आंदोलनों के परिणामस्वरूप हुआ। इन आंदोलनों का

2014, RHIMRJ, All Rights Reserved
ISSN: 2349-7637 (Online)

उद्देश्य यह था कि स्थानीय संसाधनों और विकास योजनाओं पर क्षेत्रीय नियंत्रण बढ़े और क्षेत्र के लोगों की समस्याओं का समाधान अधिक प्रभावी ढंग से किया जा सके।

3. स्थानीय शासन में मजबूती– राज्य स्वायत्तता मिलने से राज्यों को अपनी आवश्यकताओं के अनुसार नीतियाँ बनाने का अवसर मिलता है। उदाहरण के लिए, राज्य सरकारें शिक्षा, संस्कृति, कृषि और स्थानीय विकास से जुड़ी योजनाओं को अपने क्षेत्र की परिस्थितियों के अनुसार लागू कर सकती हैं। इससे प्रशासनिक दक्षता बढ़ती है और स्थानीय विकास को प्रोत्साहन मिलता है।

क्षेत्रीय आंदोलनों का संघीय राजनीति पर प्रभाव

1. गठबंधन की राजनीति– क्षेत्रीय आंदोलनों के परिणामस्वरूप कई क्षेत्रीय राजनीतिक दल उभरे, जिन्होंने राष्ट्रीय राजनीति में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया। इन दलों की बढ़ती शक्ति के कारण 1989 के बाद केंद्र में गठबंधन सरकारों का दौर शुरू हुआ। क्षेत्रीय दलों की सौदेबाजी की शक्ति बढ़ने से संघीय राजनीति अधिक सहभागी और बहुदलीय बन गई।

2. केंद्र–राज्य संबंधों में तनाव और सहयोग– कई बार क्षेत्रीय आंदोलनों के कारण केंद्र सरकार को राज्यों की मांगों के प्रति संवेदनशील होना पड़ता है। उदाहरण के लिए, हिंदी को अनिवार्य रूप से लागू करने के प्रयासों के विरुद्ध दक्षिण भारत में हुए आंदोलनों ने केंद्र को अपनी भाषा नीति में बदलाव करने के लिए प्रेरित किया। हालांकि, कुछ मामलों में ये आंदोलन केंद्र और राज्यों के बीच राजनीतिक तनाव का कारण भी बन सकते हैं।

3. प्रतिस्पर्धी संघवाद– क्षेत्रीय आंदोलनों ने राज्यों के बीच विकास और संसाधनों के बेहतर उपयोग को लेकर प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा दिया है। राज्य सरकारें अपने क्षेत्र में निवेश आकर्षित करने और आर्थिक विकास को बढ़ाने के लिए नई नीतियाँ अपनाती हैं। इससे देश के समग्र विकास में भी सकारात्मक योगदान मिलता है।

4. सुरक्षा चुनौतियाँ– कुछ मामलों में क्षेत्रीय आंदोलन उग्र या अलगाववादी रूप भी ले लेते हैं। नागालैंड या खालिस्तान जैसी मांगों ने राष्ट्रीय सुरक्षा और एकता के लिए चुनौतियाँ उत्पन्न की हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि क्षेत्रीय आकांक्षाओं को लोकतांत्रिक संवाद और संवैधानिक उपायों के माध्यम से संतुलित किया जाए।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः, भारत में भाषाई और क्षेत्रीय आंदोलनों ने राज्य स्वायत्तता और संघीय राजनीति के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इन आंदोलनों ने भाषाई और सांस्कृतिक पहचान की रक्षा करते हुए राज्यों को अधिक प्रशासनिक और वित्तीय अधिकार प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया। इसके परिणामस्वरूप राज्यों के पुनर्गठन, नए राज्यों के गठन और क्षेत्रीय दलों के उदय जैसी महत्वपूर्ण राजनीतिक प्रक्रियाएँ सामने आईं। साथ ही, इन आंदोलनों ने भारतीय संघीय व्यवस्था को अधिक बहुलतावादी, सहभागी और विकेंद्रीकृत बनाया। हालांकि, कुछ मामलों में अत्यधिक क्षेत्रीयता और अलगाववादी प्रवृत्तियाँ राष्ट्रीय एकता के लिए चुनौती भी बन सकती हैं। इसलिए आवश्यक है कि क्षेत्रीय आकांक्षाओं और राष्ट्रीय हितों के बीच संतुलन बनाए रखा जाए। लोकतांत्रिक संवाद और संवैधानिक उपायों के माध्यम से ही भारतीय संघवाद को मजबूत और स्थिर बनाया जा सकता है।

सदंर्भ–ग्रन्थ सुची

1. दुर्गादास बसु, भारत का संविधान, एक परिचय, लेन्सिस, नेक्सिस प्रकाश्न, पृष्ठ 72।
2. B. R. अम्बेडकर. (1955). थॉट्स ऑन लिंग्विस्टिक स्टेट्स (पृ. 15–22). रामकृष्ण प्रिंटिंग प्रेस।
3. बेनेडिक्ट एंडरसन. (1983). इमेजिंड कम्युनिटीजः रिफ्लेक्शन्स ऑन द ओरिजिन एंड स्प्रेड ऑफ नेशनलिज्म (अध्याय 1–2). वर्सो।
4. राज्य पुनर्गठन आयोग (1955). राज्य पुनर्गठन आयोग की रिपोर्ट. भारत सरकार, नई दिल्ली।
5. राय, परमजीत (2004). भारत में क्षेत्रीय आंदोलन और राष्ट्रीय एकता. राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली। (झारखंड, उत्तराखंड एवं छत्तीसगढ़ आंदोलनों पर केंद्रित)
6. भारत सरकार, गृह मंत्रालय (2014). आंध्र प्रदेश पुनर्गठन अधिनियम, 2014. संसद, नई दिल्ली। (तेलंगाना राज्य के गठन का विधिक आधार)

2014, RHIMRJ, All Rights Reserved
ISSN: 2349-7637 (Online)

7. वर्मा, एस.पी. एवं भारद्वाज, कुसुम (1995). भारत में संघवादः उत्पत्ति और विकास. विकास पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
8. भारत सरकार (1956). राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956. संसद, नई दिल्ली।
9. पॉल आर. ब्रास. (1974). लैंग्वेज, रिलिजन एंड पॉलिटिक्स इन नॉर्थ इंडिया (पृ. 320–350). कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

2014, RHIMRJ, All Rights Reserved
ISSN: 2349-7637 (Online)